International Journal of Sanskrit Research 2023; 9(2): 06-16

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2023; 9(2): 06-16
© 2023 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 05-02-2023
Accepted: 09-03-2023

**डॉ. प्रदीप कुमार मीणा**
झुसावाड़ा, बड़ला, खैरवाडा,
उदयपुर, राजस्थान, भारत

**Corresponding Author:**
**डॉ. प्रदीप कुमार मीणा**
झुसावाड़ा, बड़ला, खैरवाडा,
उदयपुर, राजस्थान, भारत

# दर्शनशास्त्रीय कर्म-प्रबंधन की अभिव्यक्ति में अन्तर्जालीय नाविन्य-बोध

## डॉ. प्रदीप कुमार मीणा

**DOI:** https://doi.org/10.22271/23947519.2023.v9.i3a.2078

**सारांश**
जहाँ तक कर्म क्षेत्र की बात है तो भारतीय-दर्शन ने वैश्विक मानवता को निष्काम भाव से कर्म-युजित रहने का निर्मल निर्देश दिया है, जो शाश्वत प्रासंगिक है। आधुनिक युग में, व्यक्ति को करणीय कर्म की शिक्षा प्रदान करना अत्यावश्यक है, क्योंकि मानव सद्पथ से विचलित हो गया है। दर्शनशास्त्रीय कर्म-परम्परा के निर्वहन में पुण्यकर्म से पुण्योत्पत्ति एवं पापकर्म से पापोत्पत्ति का कर्म सिद्धान्त प्रतिष्ठापित हुआ है। वेदों तथा धर्मशास्त्रों के द्वारा विहित नित्य और नैमित्तिक समस्त मानसिक, वाचिक एवं कायिक कर्म निष्काम भाव से सम्पादन करना ही कर्मयोग का सारामृत एवं प्रधान निर्देश है। प्रस्तुत आलेख के द्वारा कर्म-प्रबंधन की अभिव्यक्ति में अन्तर्जालीय नवाचारों को प्रमुख रूप से प्रकाश में लाया गया हैं जिन्हें चार पृथक-पृथक बिन्दुओं में विभाजित कर स्पष्टतः प्रतिपादित कर यह समझाने का प्रयत्न किया गया है कि किस प्रकार से भारतीय दर्शनों का कर्म-प्रबन्धन स्वोन्नति से वैश्विक-उन्नति तक का मार्ग प्रशस्त कर रहा है, उक्त अनुशीलनोपरान्त हृदय में तत्सम्बन्धी अद्य प्रासंगिक शोध आलेख की अन्तर्प्रेरणा प्रस्फुटित हुई, जो कि निम्नलिखित शुभ संकल्पित है।

**कूटशब्दः** भारतीय दर्शन, वैदिक एवं अवैदिक दर्शन, कर्म, श्रीमद्भगवतगीता, नूतनाभिव्यक्ति, वेद-प्रामाण्य, षड्दर्शन समुच्चय, अन्तर्जाल, कर्तव्याकर्तव्य कर्म, सर्वजनहिताय-सर्वजनसुखाय, निष्काम कर्मयोग, गीता का कर्मवाद, मृत्यु, पुनर्जन्म, भौतिक-विज्ञानवाद, संगणक, अन्तर्जालीय नवाचार, यूट्यूब।

## प्रस्तावना
भारतीय दर्शन का स्वरूप एवं क्षेत्र अत्यन्त व्यापक है, 'कर्म' भारतीय दर्शन का एक विषय मात्र है, ऐसा कहा जाना सही नहीं होगा, क्योकि न केवल भारतीय संस्कृति अपितु भारतीय दर्शन, भारतीय धर्म, भारतीय-मानव जीवन

सभी कर्म प्रधान है। कर्म भारतीय दर्शन का आधार है, भारतीय संस्कृति प्रारम्भ से ही कर्माधारित रही है, जिसे आप ओर हम कर्माच्छादित कह सकते है और इसी कर्माधारित भारतीय संस्कृति या दर्शन को निम्न बिन्दुयों से समझा जा सकता है-

1. भारतीय दार्शनिक परम्परा में कर्म प्रबन्धन-
2. श्रीमद्भगवतगीता में कर्म-दर्शन प्रबन्धन।
3. षड्दर्शन में कर्म प्रबन्धन।
4. दर्शनशास्त्रीय कर्म-प्रबन्धन सम्बन्धी अर्न्तजालीय नवाचार आदि।

## भारतीय दार्शनिक परम्परा में कर्म प्रबन्धन

यदि षड्दर्शन विभाजन पर प्रकाश डाले तो भारतीय दर्शन की शाखाएँ, सम्प्रदाय स्तरीय मुख्यतः दो (आस्तिक एवं नास्तिक) मानी गयी है, जिसका आधार वेद के प्रति 'श्रद्धा-निष्ठा' है। जो वेद-प्रामाण्य को स्वीकार करते हैं, वे आस्तिक दर्शन है तथा जो वेदोपनिषद् से पृथक विचार रखने वाले हैं, उन्हें 'नास्तिक दर्शन' की श्रेणी में माना गया है।[1] "सामान्यतया" आस्तिक दर्शन का अर्थ वेदानुगामी अथवा वेदानुयामी विचारणा तथा 'नास्तिक' का अर्थ वेदों के विरुद्ध या पृथक विचारणा कहा जा सकता है। आस्तिक-नास्तिक दर्शनों को ईश्वरवादी एवं अनीश्वरवादी कहा गया है। क्रमशः भारतीय दर्शन के आस्तिक सम्प्रदाय में 'षड्दर्शन समुच्चय' (न्याय, वैशेषिक, सांख्य, योग, मीमांसा, वेदान्त) को माना गया है तथा नास्तिक दर्शन सम्प्रदाय में चार्वाक, जैन एवं बौद्ध दर्शन माने गये हैं।

सब दर्शनों में छः दर्शन अधिक प्रसिद्ध हुए-महर्षि गौतम का "न्याय, 'कणाद' का 'वैशेषिक', कपिल का 'सांख्य', पतंजली का 'योग', जैमिनि का पूर्व मीमांसा और बादरायण का 'उत्तर मीमांसा' अथवा 'वेदान्त'। ये सब वैदिक दर्शन के नाम से जाने जाते हैं क्योंकि ये वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार करते हैं। जो दर्शन वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार करते हैं वे आस्तिक कहलाते हैं और जो उसे स्वीकार नहीं करते उन्हें नास्तिक की संज्ञा दी गई है। किसी भी दर्शन का आस्तिक या नास्तिक होना परमात्मा के अस्तित्व को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने पर निर्भर न होकर वेदों की प्रामाणिकता को स्वीकार अथवा अस्वीकार करने पर निर्भर है।

"नास्तिकों वेदनिन्दकः।"[2]

इस प्रकार भारतीय दर्शन की सभी परम्पराओं एवं सम्प्रदायों में किसी न किसी रूप में कर्म महत्ता को स्वीकृत किया ही है, न केवल आस्तिक षड्दर्शन परम्परा में अपितु नास्तिक दर्शन परम्परा (बौद्धादि दर्शन) से लेकर वेद, उपनिषद, धर्मसूत्र सर्वत्र कर्मगत व्याख्या तथा कर्म के निर्दिष्ट फल अर्थात् पुण्यकर्म से पुण्योत्पत्ति तथा पापकर्म से पापोत्पत्ति का स्पष्ट संदेश दिया गया है। श्रीमद्भगवद्गीता तो कर्म-निर्देशन का साक्षात् प्रतिफलित प्रकृष्ट, गहन, विस्तृत एवं शान्त तथा अगाध समुद्र है।

यदि 'कर्म' शब्द की व्युत्पति पर द्रष्टिपात करे तो 'कर्म' शब्द की व्युत्पति कृ-धातु से हुई है, जिसका अर्थ है करना (व्यापार)। कर्म का सम्बन्ध संस्कृत भाषा के शब्द कर्मन् से है जिसका अर्थ कर्तव्य, क्रिया, कृत्य या दैव से है। गीता के अनुसार मन, वाणी तथा शरीर से की गई सभी प्रकार की क्रियाएँ कर्म ही है। मोटे तौर पर यह निमित्त और परिणाम तथा क्रिया और प्रतिक्रिया कहलाता है। जिसके बारे में हिन्दू मत है कि यह सभी की चेतना को नियन्त्रित करता है।

"सतगुरु निवाय।"[3]

अन्नभट्ट विरचित सर्वाधिक मान्य कर्म की परिभाषा है-

"उत्षेपणावक्षेपणाकूजूचन प्रसारणगमनानि पञ्चकर्माणि'

1. उत्क्षेपण (ऊपर की ओर उछालना)
2. अवक्षेपण (नीचे फेंकना)
3. आकुडचन (समेटना, सिकोडना)

4. प्रसारण (फैलाना)
5. गमन (चलना) ये पाँच कर्म है।

## दार्शनिक व्याख्या में कर्म

वैदिक जगत में वेदोपनिषद एवं स्मृत्यादि ऐसे अनेक महान ग्रच्थ उपलब्ध हैं, जिनमें कर्म की विस्तृत विवेचना की गई है। भारतीय दर्शन में कर्मक्षेत्रीय संस्कृति और परम्परा का मूल कर्मपथ हैं सदवृत्ति-निधारणार्थ, कर्म के साथ कुछ विशेष नीति-नियमों का निर्देशन भी वैदिक वांग्मय में किया गया है, जो भारतीय संविधान में नीति-निर्देशक तत्त्वों के रूप में आत्मसात् किये गये हैं। वस्तुतः 'नीति-निर्देशक तत्वादि सहित कुछ अति विशिष्ट अनुच्छेद, भारत के संविधान को अन्य प्रजातान्त्रिक देशों के संविधानों से पृथक् विशेषतायुक्त बनाते है। श्रीमद्भागवत गीता में श्रीकृष्ण ने कर्मवीर नायक अर्जुन को निष्काम-भाव से 'कर्त्तव्य-कर्म में लीन रहने हेतु उपदेश दिया है।"[4]

कर्म-तत्व की व्याख्या के सन्दर्भ में श्रीकृष्ण का कथन है कि जिस कर्म का स्वरूप ही अज्ञात हो, उस कर्म में मनुष्य कैसे प्रवृत हो सकता हैं? अतः कर्म सहित अकर्म तथा विकर्म के स्वरूपों का ज्ञान होना चाहिए, क्योंकि कर्म की गति गहन है। "जो मनुष्य कर्म में अकर्म के दर्शन करता है और अकर्म में कर्म के दर्शन करता है, वह मनुष्यों में बुद्धिमान है वह योगीवत समस्त कर्मक्षम है।"[5]

प्राच्यपूज्य भारतीय-दर्शन के अनुशीलन से ज्ञात होता है कि ज्ञान के सन्दर्भ में, वैदिक दर्शन बिम्बरूप' और करणीय कर्म 'प्रतिबिम्बरूप' के समान है। वेदों में कर्तव्याकर्तव्य कर्मों का निर्देशन किया गया है, जिसके अन्तर्गत समस्त वर्णों के कर्त्तव्य-कर्म विस्तृत रूप से प्रस्तुत किये गये हैं। श्रीमद्भागवतमहापुराण, अध्यात्म-रामायण और देवीभागवत् आदि में भी कर्त्तव्य-कर्म को मानवता के कल्याण का प्रधान मार्ग संज्ञापित किया गया है। कर्म की उपादेयता एवं महत्ता विश्व-कल्याणार्थ अतुलनीय है।

योगास्त्रयो मया प्रोक्ता नृणां श्रेयोविधित्सया।[6]
ज्ञानं कर्म च भक्तिश्च नोपायो·न्यो·स्ति कुत्रचित।।
मार्गस्त्रयो मया प्रोक्ताः पुरा मोकप्राप्तिसाधकाः।[7]
कर्मयोगो ज्ञानयोगो मक्तियोगश्च शाश्वतः ।।
मार्गस्त्रयो में विख्याता मोक्षप्राप्ती नागाधिप।[8]

कोई साधक, किसी भी सम्प्रदाय अथवा सिद्धान्त को मान्यता प्रदान करता हो अथवा सिख, वैष्णव, शैव, इस्लाम या इसाई इत्यादि धर्म मत्तावलम्बी हो, किन्तु स्व कल्याण तो सर्वाभीष्ट है और स्व कल्याण से विश्व-कल्याण युजित है। वस्तुतः कर्म के दार्शनिक अध्ययन में सर्वजनहिताय-सर्वजनसुखाय सत्योद्घाटन भाव ही वियमान रहता है, 'जो तत्व विशेष के यथार्थ स्वरूप का प्रयत्नपूर्वक अवगाइन करता है एवं एकाकी सत्य का स्वरूप निःसीम एवं अनन्तविघ रूप है।[9] जो देश, काल, दिक्, स्थिति, दृष्टि-आयाम आदि भेदों के कारण विविध रूपों में आविर्भूत होता है।

भर्तृहरि ने नीतिशतकम् में कर्म को नमन करते हुए ईश्वर से गुरुतर दर्शाया है एवं कर्मों की दुर्ज्ञेय गति की महिमा-व्याख्या में स्पष्ट किया है कि सृष्टि-रचयिता ब्रह्मा भी कर्म के वशीभूत होकर कर्म में लीन रहते हैं।

ब्रह्मा येन कुलालवन्नियमितों ब्रह्माण्डभाण्डोदरे"
विष्युर्येन दशावतारगहने क्षिप्ते महासंकटे ।।[10]

इसी प्रकार यदि गीता के निष्काम कर्मयोग को यदि अपने वास्तविक रूप में समझकर स्वीकृत कर लिया जाए तो न केवल व्यक्ति वरन् समाज तथा वैश्विक उन्नति अवश्यम्भावी है, क्योंकि उसमें व्यक्ति कर्म परित्याग न करके समाज एवं विश्व की उन्नत्यार्थ समर्पित भाव से निःपृह रहते हुए कर्म करता रहता है, स्वयं के लिए मुक्तिमार्ग निश्चित करते हुए वैश्विक कल्याणार्थ कर्म परक बना रहता है। गीता संन्यास या कर्मत्याग का आदेश नहीं देती वरन् फलांकाक्षा त्यागकर परिवार, समाज एवं राष्ट्र के उत्थान, पोषण, उन्नति, समृद्धि, सुरक्षा

एवं शांति हेतु कर्मरत बने रहने का आदेश देती है, जिसे निम्न बिंदु से समझा जा सकता है-

**श्रीमद्भगवतगीता में कर्म-दर्शन प्रबन्धन**

गीता में जीवन का सार है, श्री कृष्ण ने महाभारत युद्ध में अर्जुन को कुछ उपदेश दिए थे, जिससे उस युद्ध को जीतना पार्थ के लिए आसान हो गया। इसी प्रकार निम्न गीता के कुछ उपदेशों को अपने जीवन में शामिल करके हम भी अपने लक्ष्य को पाने में सक्षम होंगे और यहीं उपदेश गीता के कर्मवाद की तात्कालिक यर्थाथता भी है, क्योंकि कर्मवाद के सिद्धान्त जब तक वास्तविक जीवन में यथार्थपरक नहीं होगें तब तक कर्मयोग व कर्मवाद को पढ़ना नि:सार ही है।

1. **क्रोध पर नियन्त्रण-** क्रोध से भ्रम पैदा होता है, भ्रम से बुद्धि व्यग्र होती है, जब बुद्धि व्यग्र होती हैं तब तर्क नष्ट हो जाता हैं जब तर्क नष्ट होता हैं तब व्यक्ति का पतन हो जाता हैं।
2. **देखने का दृष्टिकोण-** जो ज्ञानी व्यक्ति ज्ञान और कर्म को एक रूप नें देखता है, उसी का दृष्टिकोण सही है।
3. **मन पर नियंत्रण** - जो मन को नियंत्रित नहीं करते वह स्वयं अपने लिए शत्रु के समान कार्य करता है।
4. **स्वयं का आकलन** - आत्म-ज्ञान की तलवार से काटकर अपने हृदय से अज्ञान के संदेह को अलग कर दो, अनुशासित रहो, उठों ।
5. **स्वयं का निर्माण** - मनुष्य अपने विश्वास से निर्मित होता है जैसा वो विश्वास करता है वैसा वो बन जाता है।
6. **हर काम का फल मिलता है-** इस जीवन में कोई कर्म व्यर्थ नहीं होता है।
7. **अभ्यास जरुरी** - मन अशांत हैं और उसे नियंत्रित करना कठिन है, लेकिन अभ्यास से इसे वश में किया जा सकता है।
8. **विश्वास के साथ विचार** - व्यक्ति जो चाहे बन सकता है, यदि वह विश्वास के साथ इच्छित वस्तु पर लगातार चिंतन करें ।
9. **दूर करें तनाव-** अप्राकृतिक कर्म बहुत तनाव पैदा करता है।
10. **अपना काम पहले करें** - किसी और का काम पूर्णता से करने से कहीं अच्छा है कि अपना काम पहले तन्मन्यता से पूर्ण करे।

इस प्रकार गीता में कर्मवाद कोरी तार्किकता पर आधारित न होकर वास्तविक जीवन में सक्रिय रहकर परमश्रेय मोक्ष तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त करता है।

गीता का कर्मवाद हमें न केवल जीवन जीने का तरीका बताता हैं वरन् किस प्रकार निष्काम भाव के साथ कर्मों को किया जाए उन्हें यथार्थ जीवन नें उतारा जाए एवं स्वयं के न केवल आध्यात्मिक वरन् भोतिक उन्नयन के मार्ग को भी प्रशस्त करने वाला हैं, गीता का कर्मवाद व्यक्ति को स्वनिर्माण की प्रेरणा देकर उसे यथार्थपरक जीवन में आध्यात्मिकता के साथ उन्नति करते हुए स्वनिर्माण से विश्व उत्थान तक का मार्ग प्रशस्त करता है।

'योगः कर्मसु कौशलम्'

अर्थात् जो भी कर्म करो उसको पूर्णता, निपुणता, सुन्दरता और कुशलता से करो।

**षड्दर्शन में कर्म प्रबन्धन**

वैदिक दर्शनों में षड्दर्शन अधिक प्रसिद्ध है। ये सांख्य, योग, न्याय, वैशेषिक, मीमांसा और वेदांत के नाम से विदित है। इनके प्रणेता कपिल, पतंजलि, गौतम, कणाद, जैमिनि व बादरायण थे। दर्शनशास्त्र का कार्य जीवन को व्यवस्थित करना और कर्म करने के लिए उचित मार्ग का प्रदर्शन करना है। इसका स्थान सबसे आगे है जहाँ से यह इस जगत के परिवर्तनों तथा आकस्मिक घटनाओं के अन्दर से हमें उचित मार्ग का निर्देश करता है। यदि दर्शनपद्धति सजीव हो तो जनसाधारण के जीवन तथा दर्शन में दूरी का अन्तर नहीं रहता दार्शनिक

अनुशासन ही एक प्रकार से कर्म के माध्यम से धार्मिक तथा आध्यात्मिक व्यवसाय की पूर्ति करता है।

'कर्म' हिंदू धर्म की वह अवधारणा है, जो एक प्रणाली के माध्यम से कार्य-कारण के सिद्धांत की व्याख्या करती है, जहाँ पिछले हितकर कार्यों का हितकारी प्रभाव और हानिकारक कार्यों का हानिकर प्रभाव होता है, जो पुनर्जन्म का एक चक्र बनाते हुए आत्मा के जीवन में पुनः अवतरण या पुनर्जन्म[11] की क्रियाओं और प्रतिक्रियाओं की एक प्रणाली की रचना करती है। "कहा जाता है कि कार्य-कारण सिद्धांत न केवल भौतिक दुनिया में लागू होता है वरन् हमारे विचारों, शब्दों, कार्यों और उन कार्यों पर भी लागू होता है। जो हमारे निर्देशों पर दूसरे किया करते है।[12] जब पुनर्जन्म का चक्र समाप्त हो जाता है, तब कहा जाता है कि उस व्यक्ति को मोक्ष की प्राप्ति होती है, या संसार से मुक्ति मिलती है।[13] सभी पुनर्जन्म मानव योनि में ही नहीं होते हैं। कहते है कि पृथ्वी पर जन्म और मृत्यु का चक्र 84 लाख योनियों में चलता रहता है, लेकिन केवल मानव योनि में ही इस चक्र से बाहर निकलना संभव है।[14] छः भारतीय दर्शन न केवल करणीय कर्मों की व्याख्या करते हैं अपितु स्वगत तथा परगत कर्मो के माध्यम से उसी मोक्ष तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त करते हैं-

## सांख्य शास्त्र में कर्म निरूपण

सांख्य दर्शन निःसन्देह भारतीय दर्शन के प्राचीनतम सम्प्रदायों में परिगणित है। परम्परानुसार महर्षि कपिल सांख्य के प्रतिष्ठापक आचार्य माने जाते हैं। किन्तु 'सांख्यप्रवचनसूत्र' जिसे कपिल मुनि की रचना माना जाता है संभवतः कपिल प्रणीत नहीं हो सकती। अधिकांश विद्वान् इसे चौदहवीं शती की रचना मानते हैं। शंकराचार्य तथा अन्य प्राचीन आचार्यों ने 'सांख्यप्रवचनसूत्र' का न तो उल्लेख किया है और न इसे उद्धृत किया है।

सांख्य के अनुसार कर्म पूर्ण रूप से बन्धन और मोक्ष का कारण नहीं है। नैतिक पुण्यकर्म चैतन्य की गहराई तक पहुंचने में हमारे सहायक बनते हैं, जबकि दुष्कर्म इस चैतन्य को अन्धकारमय बनाते हैं। कर्मों के सन्दर्भ में सांख्य की अवधारणा है कि दुराचरण तथा बुरे कर्मों में लिप्त रहने से आत्मा अपने को भौतिक शरीर में अधिकाधिक फंसा लेती है।

इस प्रकार यद्यपि सांख्य के अनुसार कर्मों से मोक्ष प्राप्ति प्रत्यक्षतः सम्भव नहीं है, किन्तु सुकर्म एवं निष्काम कर्म कहीं ना कहीं सांख्य के उस मोक्ष जो कि दुःख की आत्यन्तिक निवृत्ति मात्र है का मार्ग प्रशस्त करने में सहायक तो बनते ही है एवं अखण्ड आनन्द रूप नहीं है। अर्थात् सांख्य के अनुसार मोक्ष निर्गुण स्थिति है अतः मोक्ष से सुख नहीं हो सकता। सुख-दुःख सापेक्ष है अतः सुख के साथ दुःख भी रहेगा। मोक्ष सुख-दुखातीत है। मोक्ष का आनन्द सुख-दुःख दोनों से रहित है तथा दोनों के ऊपर है। अतः सांख्य का मोक्ष दुःख की आत्यन्तिक निवृत्ति है। इस मोक्ष की प्राप्ति हेतु प्रकृति तथा पुरुष का पृथक्त्व विवेक ज्ञान ही मुख्य है किन्तु सुकर्म तथा नैतिक कार्य कहीं ना कहीं अप्रत्यक्षतः उस मार्ग में सहायता अवश्य करते हैं। सांख्य का 'कार्यकारणवाद' भी कार्य की कारण में विद्यमानता को स्वीकृत करता है अर्थात जैसा कारण होगा वैसा कार्य होगा।

## योग दर्शन में कर्मगति

भारतीय षड्दर्शनों में योगदर्शन का अत्यधिक महत्त्व है। तत्त्व साक्षात्कार या आत्म साक्षात्कार के लिये योग साधना की आवश्यकता प्रायः सभी दर्शनों एवं धार्मिक सम्प्रदायों में स्वीकार की गई है। वैदिक एवं अवैदिक दर्शनों में भी इसकी उपादेयता को स्वीकार किया गया है। संहिता, आरण्यक और उपनिषद् में भी योग का वर्णन है।

योग के अनुसार कर्मों से मुक्ति चित्तवृत्ति निरोध द्वारा ही सम्भव है। योग के अनुसार चित्त की पाँच

वृत्तियाँ अर्थात् अवस्थाएँ होती है क्षिप्त, मूढ, विक्षिप्त, एकाग्र, निरुद्ध।

- **क्षिप्त** चित् में रजोगुण का आधिक्य होने से वह अस्थिर चंचल और विषयोन्मुख होकर सुख दुःख भोगता है एवं तूफान में घिरी नाव के समान दोलायमान रहता है।
- **मूढ** चित में तमोगुण आधिक्य के कारण विवेक शून्य कर्त्तव्याकर्त्तव्य बोध रहित बनकर प्रमाद आलस्य एवं निद्रा के साथ विवेकहीन कार्यों में प्रवृत्त होता है।
- **विक्षिप्त** चित्त में सत्त्वगुण की अधिकता होती है किन्तु कभी-कभी रजोगुण भी पाया जाता है इसमें सत्त्वगुण के साथ कभी स्थिरता तो कभी रजोगुण के साथ चंचलता रहती है।
- **एकाग्र** चित्त में सत्त्व का अत्यन्त उत्कर्ष तथा रजोगुण एवं तमोगुण दबे रहते है चित्त समस्त बाह्य वृत्तियों से रहित होकर ध्येय वृत्ति पर एकाग्र रहता है।
- **निरुद्ध** चित्त अन्तिम भूमि (वृत्ति) कहलाती है इसमें वृत्तियों का कुछ काल तक निरोध हो जाता है किन्तु उनके संस्कार बने रहते है। जब समस्त वृत्तियों, कर्मों और संस्कारों का सर्वथा निरोध होकर अविद्या वृत्ति होने पर चित्त इन सभी से निरुद्ध हो जाता है तो वही मोक्ष की अवस्था कहलाती है।

योग दर्शनानुसार कर्म की क्रियाएँ या तो बाह्य होती है या मानसिक अर्थात् आन्तरिक। उनके चार प्रकार के भाग किये गये है- कृष्णकर्म दुष्टकर्म है जो बाह्य जैसे दूसरे की निन्दा करना अथवा आन्तरिक जैसे विश्वास (श्रद्धा का अभाव) दूसरे शुक्ल कर्म - धार्मिक क्रियाएं है वे आन्तरिक है जैसे श्रद्धा ज्ञान आदि।

योगदर्शन के अनुसार व्यक्ति प्रारब्ध संचित तथा आगामी कर्मों के बन्धन से ईश्वरेच्छा से मुक्त होकर समाधि तथा अष्टांग योग के माध्यम से समाधिस्थ होकर अन्तिम एवं परम लक्ष्य मोक्ष अर्थात् कैवल्य को प्राप्त करता है। इस प्रकार योगदर्शन का कहीं कोई स्पष्ट कर्मसिद्धान्त न होने पर भी अन्तिम लक्ष्य हेतु कर्मों की अच्छाई-बुराई के आधार पर ही ईश्वर द्वारा सहायता प्रदान करना बताया गया है। कर्म प्रत्यक्षतः न सही अप्रत्यक्षतः सर्वोपरि स्वीकृत किए हैं।

## न्यायदर्शन में कर्मवाद

गौतम मुनि जो 'अक्षपाद' के नाम से भी जाने जाते है। प्राचीन न्याय के प्रवर्तक आचार्य है एवं न्याय सूत्र के रचयिता है। न्याय का अर्थ प्रमाणों द्वारा तत्त्व परीक्षण माना गया है न्याय दर्शन को प्राचीनकाल से ही बहुत प्रतिष्ठा के साथ देखा जाता रहा है।

न्यायदर्शन की विशेषता यह है कि यह आध्यात्मिक समस्याओं का आलोचनात्मक दृष्टि से विवेचन करता है वाचस्पति के अनुसार न्यायशास्त्र का उद्देश्य ज्ञान के विषयों की तर्कबुद्धि के द्वारा आलोचना एवं छानबीन करना है।

प्रमाणैरर्थ परीक्षणम्।[15]

ऐसे स्वतः प्रवृत्त कर्म जो आन्तरिक प्रेरणाओं के कारण होते हैं तथा स्वतः सम्पन्न होते हैं जिनके सम्पादन में इच्छा की प्रेरणा का कोई स्थान नहीं है, वस्तुतः नीतिशास्त्र के क्षेत्र में नहीं आ सकते। "आत्मा स्वयं इच्छा व द्वेष की दोषी नहीं है, ये बाहर से उस पर आते हैं। यदि आत्मा स्वयं एक अचेतन व्यक्तित्व रखती तो राग-द्वेष इसके भाग्य का निर्माण करते और आत्मा भी उसी के साथ खिंचती।[16] न्याय के अनुसार समस्त कर्मों का प्रयोजन सुखप्राप्ति तथा दुःख परिहार की इच्छा होता है।

जब तक हम कर्म करते रहते हैं तब तक हमारे ऊपर राग और द्वेष दोनों का ॉॉासन रहता है और हम परम श्रेय को प्राप्त नहीं कर सकते। अर्थात् कर्म हमें बन्धन में डाले रहते हैं। दुःख के प्रति

घृणा भी घृणा ही है और सुख के प्रति राग भी राग ही है। इसलिए नैयायिक कहते हैं कि हमें पृथकत्व के भाव को दबाए रखना चाहिए क्योंकि उसके मत में ऐसे व्यक्ति की प्रवृत्ति जो इन दोषों पर विजय पा लेता है पुनर्जन्म का कारण नहीं होती।[17] वे व्यक्ति जिन्होंने उक्त दोषों पर विजय पा ली है शरीर के रहते कर्म करते रह सकते हैं और वे कर्म उनके बन्धन का कारण नहीं बनते। सुकर्मों के ओकार करने से व्यक्ति इस योग्य हो जाता है कि वह शरीर तथा इन्द्रियों से आत्मा के पृथकत्व को जान सके।

हिन्दू विचारधारा के अन्य दर्शनों के समान न्यायदर्शन भी कर्म के सिद्धांत को स्वीकार करता है और ऐसा विश्वास प्रकट करता है कि हमें अपने कर्मों का फल अवश्य मिलता है। कुछ कर्म तो हमारे ऐसे होते है जिनका फल तत्काल मिलता है। जैसे खाना पकाने का कर्म है, किन्तु अन्य प्रकार के ऐसे कर्म है जिनका फल मिलने में विलम्ब होता है जैसे कि खेत में हल चलाना। पवित्र जीवन बिताना और कर्मकाण्ड-सम्बन्धी कर्म दूसरी कोटि में आते हैं क्योंकि स्वर्ग प्राप्ति मृत्यु से पूर्व हो ही नहीं सकती।

आत्मा द्वारा देहधारण का निर्धारण भी उसके पूर्वकर्मों के अनुसार ही होता है। हमारे भिन्नता रखने वाले भाग्यों का कोई एक ही सामान्य कारण ईश्वर या प्रकृति नहीं हो सकता हमारे कर्म विलुप्त हो जाते हैं, किन्तु अपने पीछे संस्कार छोड़ जाते हैं, जो फल उत्पन्न करने की योग्यता रखते हैं, एक श्रेष्ठ कर्म के संस्कार को पुण्य तथा निकृष्ट कर्म के संस्कार को पाप कहते हैं। ये दोनों मिलकर अदृष्ट या गुणावगुण की सृष्टि करते हैं जो कर्म करने वाले मनुष्य की आत्मा के अन्दर अवस्थित होता है।

ईश्वर का सृष्टि रचना रूप कर्म वस्तुतः केवल अनुकम्पावश है। अच्छे या बुरे कर्मों के विभिन्न परिणामों से अन्ततोगत्वा विभिन्नता होनी आवश्यक है।

## वैशेषिक दर्शन में कर्म व्याख्या

वैशेषिक हिन्दुओं के षड्दर्शनों में से एक दर्शन है। इसके मूल प्रवर्तक ऋषि कणाद हैं (ईसा पूर्व दूसरी शताब्दी। यह दर्शन न्याय दर्शन से बहुत साम्य रखता है किन्तु वास्तव में यह एक स्वतंत्र भौतिक-विज्ञानवादी दर्शन है।

कर्म का बहुत विस्तृत विवेचन वैशेषिक दर्शन में किया गया है। न्याय दर्शन में कहे गए 'कर्म' के पाँच भेदों को ये लोग भी उन्हीं अर्थों में स्वीकार करते हैं। कायिक चेष्टाओं को ही वस्तुतः इन लोगों ने 'कर्म' कहा है। फिर भी सभी चेष्टाएँ प्रयत्न के तारतम्य से ही होती है। अतएव वैशेषिक दर्शन में उक्त पाँच भेदों के प्रत्येक के साक्षात् तथा परंपरा में प्रयत्न के संबंध से कोई कर्म प्रयत्नपूर्वक होते हैं, जिन्हें 'सत्प्रत्यय-कर्म' कहते हैं, कोई बिना प्रयत्न के होते हैं, जिन्हें 'असत्प्रत्यय-कर्म' कहते हैं। इनके अतिरिक्त कुछ ऐसे कर्म होते हैं, जैसे पृथ्वी आदि महाभूतों में, जो बिना किसी प्रयत्न के होते हैं, उन्हें 'अप्रत्यय-कर्म' कहते हैं।

वैशेषिक दर्शन में गुण और कर्म को "द्रव्य में विषयनिष्ठ" माना गया है, उसे एक ऐसी वस्तु बताया गया है जिसकी बराबरी अन्य वस्तु अर्थात जड़-जगत् के साथ विस्तार तथा अनुक्रम के सम्बन्ध में होती है।

चंद्रकान्तर्कालंकार ने कणाद के विषय में तर्क दिया है कि "कणाद के अनुसार देश काल और आकाश एक ही द्रव्य है यद्यपि इसे इसके द्वारा उत्पन्न कार्यों तथा उन विभिन्न बाह्य परिस्थितियों के अनुसार, जो इसके साथ सम्बद्ध हो देश, काल अथवा आकाश के विभिन्न नामों से पुकारा जाता है।"

> संयोगभिन्नत्वेसति संयोग-समवायिकारणत्वं कर्मत्वम्।[18]

जो पदार्थ संयोग नामक गुण से भिन्न है तथा संयोग का असमवायिकारण होता है वह कर्म कहा जाता है। गुण के समान कर्म भी द्रव्य पर आश्रित रहने वाला धर्म है। यह गुण से भिन्न है यह वस्तुओं के संयोग एवं विभाग का कारण है। कर्म मूर्त द्रव्यों में ही रहता है। विभु द्रव्यों में नहीं। वैशेषिक दर्शन के अनुसार कर्म पाँच प्रकार के बताए गए हैं। कर्म के पाँच भेद होते हैं-

1. उत्पक्षेपण
2. अवक्षेपण
3. आकुंचन
4. प्रसारण
5. गमन

इस प्रकार वैशेषिक दर्शन के अनुसार कर्म जब यथार्थ ज्ञान से, निःस्वार्थ भाव से किया जाता है तब वह देहधारी सत्ताओं को सांसारिक वस्तुओं के आकर्षण एवं अपकर्षण से मुक्त करता हुआ व्यक्ति को मोक्ष के दैवीय आनन्द तक पहुँचने का मार्ग प्रशस्त करता है प्रत्येक आत्मा को अपने पूर्व कर्मों के फल भोगने का अवसर दिया जाता है किंतु यह आव'यक नहीं है कि वर्तमान जीवन उससे ठीक पूर्ववर्ती जीवन का परिणाम हो "क्योंकि हमारे सब मौलिक गुण सब अवस्थाओं एक ही जन्म में वास्तविक रूप धारण नहीं कर सकते।[19] हिन्दू विचारधारा की अन्य पद्धतियों की भांति वैशेषिक भी स्वीकार करता है कि हमारे लिये यह संभव है कि हम जीवन के उच्चतर स्तर तक उठ सके अथवा अपने को मनुष्य से भी निम्नतर स्तर पर गिरा ले यह सब प्राणियों के धर्माधर्म जो कि कर्मों पर आधारित होते हैं उस पर निर्भर करता है।

## मीमांसा-दर्शन में कर्मसार

महर्षि जैमिनि मीमांसा-सूत्र के रचयिता हैं, किन्तु मीमांसा के प्रवर्तक नहीं है। उन्होंने स्वयं कई पूर्व मीमांसक आचार्यों का उल्लेख किया है; किन्तु इनकी कृतियाँ उपलब्ध नहीं है।

मीमांसा दर्शन के अनुसार वेदविहित काम्य कर्मों का परित्याग कर एवं अच्छे-बुरे कर्मों के कर्मफल कापूर्ण उपभोग करके मनुष्य निष्काम रूप से सन्ध्यादि नित्य कर्म करता हुआ सारे फलदायक कर्मों से उपरत हो जाता है, तब वह मोक्ष प्राप्त करता है। नित्यकर्म वह है जिनको न करने से पाप का भागी होना पड़ता है, परन्तु जिनके निष्काम रूप से करने से किसी फल की प्राप्ति नहीं होती। इस प्रकार मनुष्य जन्ममरण रूप शरीर के बन्धन को छोड़कर मोक्ष गति प्राप्त करता है। वेदविहित तरीके से उसकी आज्ञानुसार कर्मकांडों को करने से धर्म की उत्पत्ति होती है धर्म का आधार विधि-विहित-वेद व्याख्या करके उनकी आज्ञा के अनुसार आचरण एवं कर्म करते हुए धर्म को प्राप्त करे। वैदिक विधि विधान के अनुसार किये हुए यज्ञों के कारण एक अद्भुत शक्ति का प्रादुर्भाव होता है, यह शक्ति कर्म अथवा कर्त्ता में संग्रहित होती है और उस कर्त्ता को अभीष्ट फल देती है।

इस प्रकार मीमांसा दर्शन में वैदिक कर्मकांड के आधार पर वेदविहित कर्म करते हुए जीवात्मा के लिये स्वर्ग तथा मोक्ष की प्राप्ति का सन्देश दिया गया है। कर्म निष्काम भाव से किया जाना आवश्यक है केवल कर्म ही मोक्ष का साधन नहीं बन सकते कर्म पुरस्कार की आशा में आगामी जन्म की ओर ले जाते हैं हमारी रूचियाँ तथा अरूचियाँ हमारे भावी जीवनों की निर्णायक है। कर्म विधान ईश्वर की निरन्तरता को व्यक्त करता है साथ ही मीमांसा में कर्म के स्थिर सिद्धान्त को संसार की परम यथार्थता समझा गया है इस प्रकार मीमांसा के अनुसार वेदविदित कर्म (काम्य कर्म आदि) तथा ज्ञान भावना से प्रेरति अन्य निष्काम कर्म करते हुए व्यक्ति परम ध्येय मोक्ष के निकट पहुंच सकते हैं।

## वेदान्त शास्त्र विहित कर्म सिद्धान्त

वेदान्त दर्शन की आधार भूमि उपनिषदों में वर्णित तत्त्वों को माना जाता है जिसको श्री बादरायण ने

'ब्रह्मसूत्र' में सार रूप में सूत्रों के माध्यम से स्पष्ट किया है। वैदिक साहित्य में उपनिषद् सबसे अन्त में आते हैं, अतः उपनिषदों के दर्शन को 'उत्तर मीमांसा' के नाम से भी जाना जाता है। आचार्य जैमिनी ने पूर्व 'मीमांसा सूत्र' की रचना की है और उत्तर मीमांसा दर्शन का ही सारांश श्री बादरायण ने 'ब्रह्मसूत्र' में वर्णित किया है। इन बह्यसूत्रों की अनेक व्याख्या की गई है जिनमें आचार्य शंकर का भाष्य सबसे अधिक विद्वत्तापूर्ण और प्रामाणिक माना जाता है श्री शंकराचार्य ने विद्वत्तापूर्ण भाष्य प्रस्तुत किये है- "उनके मतानुसार सारे उपनिषदों में एक ही आस्तिक दर्शन पाया जाता है जिसमें एक ब्रह्म के स्वरूप का वर्णन और उस तक पहुँचने का मार्ग निर्देश किया गया है। अपने सारे भाष्यों में उन्होंने इसी मत की प्राप्ति करने का प्रयत्न किया है।"[20] इन्होंने अद्वैत वेदान्त दर्शन की पुष्टि करते हुए यह सिद्ध करने का प्रयत्न किया है कि आत्मा और ब्रह्म एक ही है। एक ब्रह्म ही एक मात्र शाश्वत तत्त्व है।

**शंकराचार्य के अनुसार कर्म और उपासना।** चित्त को शुद्ध और एकाग्र बनाने के साधन है जिससे शुद्ध और एकाग्र चित्त ज्ञान की ज्योति ग्रहण कर सके। उपासना ध्यान रूपी मानसी क्रिया है। कर्म और उपासना अविधा में ही संभव है। ज्ञान और कर्म प्रकाश और अंधकार के समान परस्पर विरुद्ध है इनका समुच्चय नहीं हो सकता। निष्कामकर्म लोक संग्रह के लिये होता है शुभ कर्म या धर्म अपनी पुण्य नामक शक्ति से सुख रूपी फल देता है, अशुभ कर्म या अधर्म अपनी पाप नामक शक्ति से दुःख रूपी फल देता है। कर्म का फल अवश्य भोगना पड़ता है।

इसलिये अविद्या और कर्म में लिप्त व्यक्ति जन्ममरण के चक्र में घूमता रहता है कर्म में कर्ता और कर्म का द्वैत तथा उपासना में ध्याता-ध्येय या उपासक-उपास्य का द्वैत बना रहता है। कर्म और उपासना अविद्या के अन्तर्गत अति है। ज्ञान अविद्या की निवृत्ति कराता है तथा ब्रह्म ज्ञान का अवसान अपरोक्ष अनुभव में होता है-

> अनुभवावसान त्वात् भूत वस्तु विषय त्वात् च ब्रह्म ज्ञानस्य।[21]

इस प्रकार शंकराचार्य का शंकरभाष्य वेदविहित कर्मों के किये जाने को ही एकमात्र मोक्ष अथवा मुक्ति अर्थात् निश्रेयस की प्राप्ति का साधन नहीं मानते अपितु शंकराचार्य वेदविहित कर्म जैसे कि काम्य कर्म आदि व्यक्ति को किये अवश्य जाने चाहिए जिससे कि उस परम तत्त्व ब्रह्म को प्राप्त कर पाने में नैतिक अवलम्बन प्राप्त हो सके साथ ही ज्ञान तथा उपासना के मार्ग पर चलते हुए कर्मवादी बनना चाहिए तभी उस निश्रेयस की प्राप्ति संभव है।

## दर्शनशास्त्रीय कर्म-प्रबन्धन सम्बन्धी अर्न्तजालीय नवाचार

भारतीय दार्शनिक परम्परा श्रीमद्भगवद्गीता षड्दर्शन में वर्णित कर्म-निरुपण के प्रतिपादन के साथ साथ ही भारतीय दार्शनिक विवेचना में कर्म संबधि अनेक विवेचन हमें वर्तमान के संगणकीय युग में विभिन्न अंतर्जालीय पटलों पढ़ने-देखने को मिलते हैं इन्हीं पटलों पर प्रसारित दर्शन शास्त्रीय कर्म-रुपता/प्रबंधन को हम निम्न बिंदुओं के माध्यम से आत्मसात कर दर्शन शास्त्रीय कर्म की अवधारणा का प्रचार-प्रसार कर सकते है।

## लेखन संबन्धि अंतर्जालीय पटल

**विकिपीडिया-** यह एक मुक्त ज्ञानकोश पटल है जो भारतीय दर्शन के इतिहास एवं आधुनिकता के प्रत्येक पहलू को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करता है। यह दर्शन अथवा फिलोसोफि, दर्शनशास्त्र के क्षेत्र, भारतीय दर्शन, पाश्चात्य दर्शन-प्राचीन एवं अर्वाचीन पाश्चात्य दर्शन सम्बन्धी अनेक विषयों को पाढको के लिए उपलब्ध कराता है, जिसका अवलोकन निम्न QR Code को Scan कर किया जा सकता है-

उपरोक्तानुसार ही भारतीय दर्शन में कर्म की अभिव्यक्ति में 'यूनियनपीडिया' नामक अंर्तर्जालीय पटल भी है जिसका अवलोकन भी निम्न QR Code को Scan कर किया जा सकता है-

इसके अतिरिक्त भी अन्य अंतर्जालीय पटल है, जो कर्म की परिभाषा एवं वर्तमान में इसकी उपयोगिता को प्रसारित करते हैं, जिन्हें भी निम्न QR Code में लिंकबद्ध कर प्रस्तुत करने का कार्य किया गया है, ताकि इसमें वर्णित ज्ञान को भी आत्मसात किया जा सकता है-

QR Code 1. QR Code 2. QR Code .3

QR Code 4. QR Code 4. QR Code 6.

QR Code 7. QR Code 8. QR Code 9.

इसी प्रकार लेखन-पठन के अतिरिक्त आज के संगणकीय वैज्ञानिक युग में भारतीय दर्शनों में वर्णित 'कर्म' की अभिव्यक्ति को youtube के माध्यम से भी समझा जा सकता है। इस हेतु कुछ प्रमुख यूट्यूब चैनल है, जिनका नामोल्लेख विषय सहित निम्न है-

यूट्यूब चैनल– Philosophy, religion and society
विषय - भारतीय दर्शन में कर्म सिद्धांत
यूट्यूब चैनल– Sanskritganga संस्कृतगंगा
विषय - भारतीय दर्शन की भूमिका
यूट्यूब चैनल– Yoga And Ayurveda Science
विषय - वैशेषिक दर्शन के अनुसार कर्म
यूट्यूब चैनल– Department of philosophy SPCGCA SPC Govt College
विषय - भारतीय दर्शन
यूट्यूब चैनल– Gyan Parampara
विषय - भारतीय दर्शन (ज्ञान, कर्म, भक्ति और योग में भक्ति का महत्व)
यूट्यूब चैनल– Philo-Sophiya
विषय - कर्म-वैशेषिक दर्शन
यूट्यूब चैनल– Love Of Wisdom
विषय - मीमांसा दर्शन में कर्म और अपूर्व की धारणा
यूट्यूब चैनल– EDUCATION PRABHA
विषय - सांख्यदर्शन
यूट्यूब चैनल– The Quest
विषय - सांख्य दर्शन SANKHYA DARSHAN की सरल और व्यावहारिक व्याख्या
यूट्यूब चैनल– Vagishwari वागीश्वरी
विषय - षड् दर्शन परिचय, उनके प्रवृतको सिद्धांतो का सामान्य अध्ययन

उक्त सभी अन्तर्जालीय पटलों से प्रचारित-प्रसारित करने वाले उन तमाम नवचारो का उल्लेख प्रस्तुत शोधपत्र में समाहित करने का कार्य किया गया है, जिससे भारतीय दर्शन शास्त्र के साथ-साथ वर्तमान के वैज्ञानिक युग में ऑनलाइन के विभिन्न पटलों के माध्यम से हुये नवाचार को संस्कृत रसिको, जिज्ञासुओं के समक्ष प्रस्तुत किया जा सके।

## संदर्भ

1. ब्रह्म सूत्र पर मध्वाचार्य 1:1, 1
2. महाभारत 12:270, 67

3. सुब्रमुनियास्वामी : (शिव के साथ नृत्य संदर्भ)
4. श्रीमद्भगवद्गीता 2/47
5. कर्मक्षम–कार्य/कर्त्तव्य सम्पादन करने के योग्य (संहिता कोष)
6. श्रीमद्भागवत महापुराण/11/20/6
7. अध्यात्म रामायण 7/7/51
8. देवीभागवत 7/37/3
9. श्रीमद्भागवत महापुराण 11/24/18
10. श्रीमद्भागवत महापुराण 11/24/18
11. Brodd, Iefferey (2003) world Religions winoha, MN : Saint Margs press आई.एस.बी.एन.
12. 978–0–88489
13. अ आई परमहंस स्वामी महेश्वरा आनंद मानव में छिपी शक्ति, पृ.–23
14. कैरेल वर्नर हिन्दू धर्म का एक लोकप्रिय शब्दकोष 110 (कर्जन प्रेस 1994)
15. कैरेल वर्नर हिन्दू धर्म का एक लोकप्रिय शब्दकोष 110 (कर्जन प्रेस 1994)
16. न्याय सूत्र 1 : 1, 10
17. न्यायसूत्र 4 : 1, 64
18. प्रशस्तपाद कृत पदार्थ धर्म संग्रह पृ.–309
19. श्री अन्न भट्ट विरचित तर्कसंग्रह, पृ.सं.–13
20. शास्त्रदीपिका, पृ.सं.–100
21. वेदान्तसूत्र 3 : 4, 9
22. मीमांसासूत्र 1–2–1